प्रकाशन हेतु अनुमोदित

उच्च न्यायालय जबलपुर, मध्यप्रदेश

रिट याचिका क्रमांक 5104 / 1989

याचिकाकर्ता – गिरीश चंद्र त्रिवेदी, पिता श्री बी.पी. त्रिवेदी, उम्र लगभग 34 वर्ष, निवासी – द्वारा श्री मदन दुबे, हाई स्कूल रोड, जगदलपुर

विरुद्ध

उत्तरवादीगण – 1. बस्तर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, द्वारा अध्यक्ष जगदलपुर, जिला बस्तर, मध्य प्रदेश।

2. निदेशक मंडल, अध्यक्ष, बस्तर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, जगदलपुर, बस्तर, मध्य प्रदेश।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 सह पठित अनुच्छेद 227 अधीन याचिका।

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

उच्च न्यायालय, बिलासपुर छत्तीसगढ़

रिट **याचिका क्रमांक 5104 / 1989**

याचिकाकर्ता ... ...

गिरीश चंद्र त्रिवेदी

विरुद्ध

उत्तरवादीगण ... ... बस्तर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक

एवं अन्य

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

आदेश हेतु निर्धारित दिनांक 9 मार्च, 2006।

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

उच्च न्यायालय, बिलासपुर छत्तीसगढ़

रिट क्रमांक 5104 / 1989

याचिकाकर्ता गिरीश चंद्र त्रिवेदी

विरुद्ध

उत्तरवादीगण बस्तर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक एवं अन्य

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

एकल पीठ: माननीय श्री न्यायमूर्ति सतीश के. अग्निहोत्री।

श्री एन. एस. काले, वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री अभिषेक सिन्हा, अधिवक्ता के साथ – याचिकाकर्ता की ओर से। श्री प्रफुल्ल भारत, अधिवक्ता – उत्तरवादीगण की ओर से।

आदेश (मार्च २००६)

न्यायमूर्ति सतीश के. अग्निहोत्री द्वारा निम्नलिखित आदेश पारित किया गया:

1. बस्तर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक (संक्षेप में 'बैंक') एक संयुक्त उपक्रम है, जो कि केंद्र सरकार एवं राज्य सरकार द्वारा स्थापित है तथा भारतीय स्टेट बैंक से संबद्धित है। याचिकाकर्ता को 22.06.1981 को उत्तरदायी–बैंक द्वारा शाखा प्रबंधक के रूप में नियुक्त किया गया था तथा उनकी पदस्थापना सम्बलपुर शाखा में की गई थी। तत्पश्चात याचिकाकर्ता को उसी पद पर तहसील एवं जिला – जगदलपुर (बस्तर) स्थित सोनारपाल शाखा में

स्थानांतरित किया गया। ऐसा आरोप है कि याचिकाकर्ता ने सम्बलपुर शाखा एवं सोनारपाल शाखा में शाखा प्रबंधक के रूप में कार्यकाल के दौरान अनेक गंभीर अनियमितताएँ कीं एवं अपने पद का दुरुपयोग करते हुए उत्तरदायी–बैंक को हानि पहुँचाई।

2. याचिकाकर्ता को 21.09.1985 को **(परिशिष्ट 'A')** एक कारण बताओ नोटिस जारी किया गया, जो सम्बलपुर शाखा में उनकी पदस्थापना के दौरान की गई अनियमितताओं से संबंधित था, जो निम्नलिखित हैं:

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

a) याचिकाकर्ता द्वारा 38 व्यक्तियों को ऋण स्वीकृत किया गया, जो दस्तावेजों में उल्लिखित ग्रामों के निवासी नहीं थे और न ही कभी उक्त ग्रामों में निवासरत थे।

b) 19 व्यक्तियों को दिए गए ऋण फर्जी पाए गए, क्योंकि उक्त 19 व्यक्तियों ने लिखित में यह सूचित किया कि उन्होंने बैंक से कभी कोई ऋण प्राप्त नहीं किया।

c) याचिकाकर्ता ने 07.07.1982 को एक खाता धारक धर्मू राम के पासबुक में ₹700/– की जमा प्रविष्टि की, जबकि बैंक के खाता पुस्तिका में ऐसी कोई जमा प्रविष्टि नहीं थी। इस प्रकार याचिकाकर्ता ने उक्त राशि प्राप्त कर ली किंतु उसे बैंक में जमा नहीं किया।

d) याचिकाकर्ता ने 7/8.09.1983 को कमलेश कुमार तिवारी के पासबुक एवं बैंक की लेजर शीट में ₹100/– की जमा प्रविष्टि की, किंतु उक्त प्रविष्टि दैनिक लेन–देन पंजिका एवं कैशियर की रसीद भुगतान पंजिका में दर्ज नहीं थी। इस प्रकार याचिकाकर्ता ने राशि प्राप्त कर उसे बैंक में जमा नहीं किया।

e) याचिकाकर्ता ने 15.10.1983 को अपने स्वयं के बैंक खाते से ₹230/– आहरित किए, जबकि उक्त खाते में वास्तविक शेष राशि ₹157.54 थी, जिससे ₹100/– की ओवरड्राफ्ट प्रविष्ट की जानी चाहिए थी। ओवरड्राफ्ट से बचने हेतु याचिकाकर्ता ने प्रविष्टियों में हेरफेर करते हुए ₹230/– को ₹130/– में परिवर्तित कर दिया एवं आहरण प्रपत्र को ₹130/– के नए प्रपत्र से प्रतिस्थापित कर, दिनांक 15.10.1983 से 30.11.1983 की अवधि में ₹100/– की राशि का गबन किया।

f) याचिकाकर्ता ने शाखा प्रबंधक के रूप में स्वीकृति प्रदान करने एवं ऋण वितरण के संबंध में अपनी विवेकाधीन शक्तियों की सीमा से अधिक जाकर ऋण स्वीकृत किए, जिससे उन्होंने अपने पद का दुरुपयोग किया।

3. **याचिकाकर्ता को एक और आरोप–पत्र दिनांक 23.09.1985 (परिशिष्ट–'B') जारी किया गया**, जिसमें यह उल्लेख किया गया कि

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

उन्होंने सोनारपाल शाखा में शाखा प्रबंधक के रूप में पदस्थापना के दौरान गंभीर अनियमितताएँ कीं, जिनका विवरण निम्नानुसार है:

(a) दिनांक 10.04.1985 को शाखा के निरीक्षण के दौरान ₹100/- की राशि की कमी पाई गई, जिसे याचिकाकर्ता ने स्वीकार किया और घाटे की पूर्ति हेतु ₹100/- का एक आहरण प्रपत्र प्रस्तुत किया, जिसकी प्रविष्टि लेन-देन पंजिका तथा कैशियर रसीद भुगतान पंजिका में की गई। तथापि, दिनांक 14.04.1985 को निरीक्षण के दौरान यह पाया गया कि प्रविष्टियों में फेरबदल किया गया था तथा याचिकाकर्ता के नाम के स्थान पर श्री आर.के. गुप्ता का नाम अंकित कर दिया गया था। इस प्रकार, याचिकाकर्ता ने प्रविष्टियों में परिवर्तन कर बैंक अभिलेखों में हेराफेरी की, जिससे घाटे की भरपाई की जा सके।

(b) दिनांक 17.04.1985 को निरीक्षण के दौरान याचिकाकर्ता के मेज़ की दराज़ में एक पर्ची प्राप्त हुई, जिसमें आठ व्यक्तियों के नाम ₹40/- की राशि के साथ अंकित थे। पूछताछ करने पर याचिकाकर्ता ने बताया कि उक्त राशि उसने ऋणकर्ताओं के लिए स्टाम्प क्रय हेतु प्राप्त की थी। तथापि, उक्त राशि स्टाम्प खाते में जमा नहीं की गई थी। याचिकाकर्ता का यह कृत्य बैंक विनियमों के विपरीत होकर, राशि को अवैध रूप से अपने पास रखने के समान था।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

(c) यह भी पाया गया कि 10.04.1985 को नौ खातों में ऋण स्वीकृत किए गए थे, किंतु निरीक्षण की तिथि तक संबंधित व्यक्तियों से कोई दस्तावेज निष्पादित नहीं कराया गया था, जिसे याचिकाकर्ता ने स्वीकार किया।

(d) बैंक अभिलेखों में दिनांक 24.01.1985 एवं 25.01.1985 को पाँच व्यक्तियों को ऋण वितरण दर्शाया गया था, किंतु सत्यापन पर यह पाया गया कि उक्त व्यक्ति अभिलेखों में उल्लिखित ग्राम में निवासरत नहीं थे, और कभी भी वहाँ निवास नहीं करते थे। इनमें से चार खातों को पूर्ण एवं अंतिम भुगतान के बाद बंद कर दिया गया था और एक खाते में राशि एकमुश्त जमा कर दी गई थी। इस प्रकार, याचिकाकर्ता ने काल्पनिक व्यक्तियों के नाम पर ऋण स्वीकृत किए और उक्त राशि का गबन किया।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

4. अतएव, याचिकाकर्ता के विरुद्ध कुल दस आरोप लगाए गए। जांच अधिकारी के रूप में श्री गजानन प्रसाद पांडे को तथा प्रस्तुतकर्ता अधिकारी के रूप में श्री मेघराज पाठक को नियुक्त किया गया। यह विभागीय जांच दिनांक 19.10.1986 को पूर्ण हुई तथा जांच प्रतिवेदन दिनांक 06.12.1987 को जांच अधिकारी द्वारा अनुशासनात्मक प्राधिकारी को प्रस्तुत किया गया। अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा दिनांक 23.12.1987 को याचिकाकर्ता को दंड प्रस्तावित किया गया।

याचिकाकर्ता ने दिनांक 18.03.1988 को अपना प्रत्युत्तर प्रस्तुत किया। याचिकाकर्ता के प्रत्युत्तर पर विचार करते हुए तथा उसे व्यक्तिगत सुनवाई का अवसर प्रदान करते हुए अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने दिनांक 12.05.1988 को अंतिम आदेश (परिशिष्ट–'F') पारित किया, जिसके अनुसार याचिकाकर्ता को बैंक की सेवा से **12.05.1988 के कार्यदिवस की समाप्ति पर, बिना किसी पूर्व सूचना के, बर्खास्त** कर दिया गया, जो कि भविष्य में किसी भी रोजगार हेतु **अयोग्यता (disqualification)** मानी जाएगी।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

5. तत्पश्चात, याचिकाकर्ता ने बैंक विनियमों की धारा 32 के अंतर्गत दिनांक 12.05.1988 के अनुशासनात्मक प्राधिकारी के आदेश के विरुद्ध **वैधानिक अपील** बैंक के निदेशक मंडल के समक्ष प्रस्तुत की। दिनांक 21.09.1989 की सूचना के माध्यम से याचिकाकर्ता को अवगत कराया गया कि निदेशक मंडल ने दिनांक 20.09.1989 को अपनी बैठक में अपील में उठाए गए सभी बिंदुओं पर विस्तार से विचार–विमर्श किया और **अपील को निरस्त कर दिया गया**।

6. याचिकाकर्ता ने याचिका में यह अभिकथन किया है कि तत्कालीन बैंक अध्यक्ष श्री आर. पी. बोस द्वारा याचिकाकर्ता को एक बलि का बकरा बना दिया गया, जिसमें उस समय सम्बलपुर शाखा के शाखा प्रबंधक श्री नामदेव तथा सोनारपाल शाखा के शाखा प्रबंधक श्री पवार की सहायता ली गई। श्री आर. पी. बोस को याचिकाकर्ता के प्रति व्यक्तिगत द्वेष था, क्योंकि

याचिकाकर्ता यूनियन के एक सक्रिय सदस्य थे। श्री बोस ने उस यूनियन को मान्यता देने से इनकार कर दिया था, जिसके सदस्य याचिकाकर्ता थे। इस संदर्भ में याचिकाकर्ता और श्री आर. पी. बोस के मध्य कई तीव्र बहसें हुई थीं। दिनांक 07.05.1988 को याचिकाकर्ता को प्रदान की गई व्यक्तिगत सुनवाई के दौरान भी श्री आर. पी. बोस ने याचिकाकर्ता को सेवा से बर्खास्त करने की धमकी दी थी। याचिकाकर्ता के विरुद्ध एक झूठा प्रकरण रचाया गया है। बर्खास्तगी का आदेश दुर्भावनापूर्ण एवं मनमाना है और निरस्त किए जाने योग्य है। याचिकाकर्ता ने यह भी अभिकथन किया है कि जांच अधिकारी श्री जी. पी. पांडे, याचिकाकर्ता से कनिष्ठ थे, क्योंकि याचिकाकर्ता को श्री पांडे से पहले स्थायीकरण प्राप्त हो चुका था। अतः, कर्मचारी विनियम 13(3) का उल्लंघन कर श्री पांडे को जांच अधिकारी नियुक्त नहीं किया जा सकता था। उक्त विनियम यह निर्धारित करता है कि यदि किसी अधिकारी /कर्मचारी की परिवीक्षा अवधि बढ़ा दी जाती है, तो उसकी वरिष्ठता उसी बैच के अन्य समकक्ष नियुक्त अधिकारियों /कर्मचारियों के ठीक नीचे मानी जाएगी।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

7. याचिकाकर्ता की ओर से प्रस्तुत विद्वान अधिवक्ता ने अतिरिक्त रूप से यह तर्क प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता को कुछ दस्तावेजों की जांच करने की अनुमति नहीं दी गई और यह कहकर मना कर दिया गया कि वे दस्तावेज राज्य आर्थिक अपराध अन्वेषण ब्यूरो (संक्षेप में 'ब्यूरो') द्वारा जब्त कर

लिए गए हैं। अतः, याचिकाकर्ता को समुचित सुनवाई का अवसर नहीं दिया गया और संपूर्ण विभागीय जांच प्रक्रिया दूषित हो गई।

8. उत्तरवादी बैंक की ओर से प्रस्तुत विद्वान अधिवक्ता श्री प्रफुल भारत ने उत्तर में प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता ने स्वयं यह स्वीकार किया है कि उन्होंने 38 व्यक्तियों को ऋण प्रदान करते समय स्थल निरीक्षण नहीं किया और संभावित ऋणकर्ताओं से कोई जानकारी नहीं ली। उक्त अधिकारी ने अपने अपराध को स्वीकार किया तथा भविष्य में ऐसी त्रुटि न दोहराने का आश्वासन दिया। याचिकाकर्ता ने बैंक के नियमों का उल्लंघन किया, जैसे ऋण प्रदान करने की प्रक्रिया, बैंक अभिलेखों में प्रविष्टियाँ, धन आहरण प्रपत्र आदि। एक विस्तृत जांच की गई। याचिकाकर्ता को सभी दस्तावेजों की जांच का पूर्ण अवसर दिया गया, सिवाय उन एक–दो दस्तावेजों के जो बैंक के पास उपलब्ध नहीं थे क्योंकि उन्हें ब्यूरो ने जब्त कर लिया था। विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क प्रस्तुत किया कि यह माननीय न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 226/227 के अधीन **अपवादाधिकार क्षेत्र (extraordinary jurisdiction)** का प्रयोग करते समय **अपील न्यायालय (appellate court)** के रूप में कार्य नहीं कर सकता। याचिकाकर्ता के विरुद्ध लगाए गए आरोपों के समर्थन में पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध हैं। जहाँ तक सम्बलपुर शाखा की जांच का संबंध है, कुल 6 आरोपों में से आरोप सं. 1, 2, 5 एवं 6 सिद्ध हुए हैं, जबकि आरोप सं. 3 एवं 4 जांच

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

अधिकारी द्वारा सिद्ध नहीं पाए गए। सोनारपाल शाखा में की गई अनियमितताओं के संबंध में सभी आरोप सिद्ध हुए हैं।

9. उत्तरवादीगण के अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया कि यह पूर्णतः गलत है कि श्री पांडे याचिकाकर्ता से अधिकारी वर्ग में कनिष्ठ थे। कर्मचारी विनियम अध्याय–III के परिच्छेद 13(3) के अनुसार, चयन के समय आवंटित की गई वरिष्ठता ही पूरी सेवा अवधि में लागू रहती है, न कि स्थायीकरण की तिथि। अधिवक्ता ने (परिशिष्ट R/25) में संलग्न वरिष्ठता सूची का उल्लेख किया, जिसमें श्री पांडे को याचिकाकर्ता से वरिष्ठ दिखाया गया है। याचिकाकर्ता ने श्री पांडे की नियुक्ति पर, न तो जांच प्रारंभ होने से पूर्व और न ही जांच के दौरान कोई आपत्ति उठाई। अतः, अब वे जांच अधिकारी की वैधता को चुनौती देने से **वंचित (estopped)** हैं। इस तर्क के समर्थन में प्रतिवादी के अधिवक्ता ने उच्चतम न्यायालय के निर्णय **पंकजेश विरुद्ध तुलसी ग्रामीण बैंक एवं अन्य (AIR 1997 SC 2654)** का हवाला दिया, जिसमें **अनुच्छेद 6** में यह कहा गया:

> "**6.** अतः, विनियम के अंतर्गत जांच ऐसे व्यक्ति को सौंपी जा सकती है जो दोषी अधिकारी से उच्च पद पर हो, यदि वह कोई अधिकारी हो। परन्तु, इस प्रकरण में हम याचिकाकर्ता के लिए कोई गंभीर अन्याय नहीं पाते, क्योंकि यद्यपि यह सदा वांछनीय होता है कि दोषी अधिकारी से उच्च पदस्थ अधिकारी द्वारा जांच की जाए, फिर

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

भी वह जांच अनुशासनात्मक प्राधिकारी के प्रतिनिधि के रूप में की जाती है। अन्ततः निर्णय अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा ही लिया जाता है। केवल जांच के सौंपे जाने मात्र से, भले ही जांच अधिकारी याचिकाकर्ता के समान पद का या उच्च पद का हो, कोई भौतिक अनियमितता या याचिकाकर्ता को अन्याय नहीं हुआ। इन परिस्थितियों में, हमें ऐसा कोई दोष नहीं दिखाई देता जो न्यायिक हस्तक्षेप को उचित ठहराए।"

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

10. मैंने श्री एन. एस. काले, वरिष्ठ अधिवक्ता को श्री अभिषेक सिन्हा, याचिकाकर्ता के अधिवक्ता के साथ तथा श्री प्रफुल भारत, प्रतिवादी बैंक के अधिवक्ता को सुना और याचिका के साथ संलग्न दस्तावेजों एवं बैंक द्वारा प्रस्तुत उत्तर का अवलोकन किया।

11. याचिका में कुछ अधिकारियों के विरुद्ध लगाए गए आरोपों से संबंधित अभिकथन केवल याचिकाकर्ता के एकपक्षीय कथन (ipse-dixit) हैं। ये कथन अस्पष्ट हैं और किसी भी दस्तावेज/साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं हैं। यह ऐसा प्रकरण नहीं है जिसमें जांच अधिकारी द्वारा दी गई प्रतिवेदन ऐसे साक्ष्यों पर आधारित हो जो अस्तित्वहीन हों या अविश्वसनीय हों। जांच अधिकारी ने सभी पहलुओं का विस्तृत परीक्षण किया है। याचिकाकर्ता को पूर्ण अवसर प्रदान किया गया कि वह अपने पक्ष को प्रस्तुत कर सके, गवाहों को बुला सके तथा बैंक द्वारा प्रस्तुत गवाहों और दस्तावेजों से जिरह

कर सके। अतः यह नहीं कहा जा सकता कि जांच प्रतिवेदन में कोई गंभीर त्रुटि या दोष है। जांच प्रतिवेदन प्राप्त होने के पश्चात् दंड आरोपित करने से पहले अनुशासनिक प्राधिकारी ने याचिकाकर्ता को दूसरा अवसर प्रदान किया, जिससे प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन किया गया। याचिकाकर्ता ने बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स के समक्ष एक वैधानिक अपील भी दायर की थी। बोर्ड ने जांच अधिकारी की प्रतिवेदन से सहमति व्यक्त की और अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा आरोपित दंड को यथावत् बनाए रखा।

12. यह सिद्ध नहीं होता कि जांच अधिकारी, दोषारोपित अधिकारी से कनिष्ठ था और यदि वह अधिकारी उसी बैच से है तो उसे जांच अधिकारी नियुक्त किया जा सकता है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

13. जांच प्रतिवेदन को अनुशासनिक प्राधिकारी तथा अपीलीय प्राधिकारी दोनों ने अनुमोदित किया है। यह न्यायालय, संविधान के अनुच्छेद 226/227 के अंतर्गत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन कर भिन्न निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकता, यद्यपि वह एक संभावित निष्कर्ष हो सकता है।

14. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **तमिलनाडू राज्य एवं अन्य विरुद्ध एस. वेलराज** {(1997) 2 SCC 708} में यह निर्णय दिया कि—

"जांच अधिकारी द्वारा दर्ज निष्कर्ष तथा अपीलीय प्राधिकारी द्वारा इसकी पुष्टि, जांच के दौरान प्रस्तुत साक्ष्यों पर आधारित थी और यह भी नहीं कहा गया कि ये निष्कर्ष विकृत (perverse) थे। अतः अधिकरण को

विरोधाभासी निष्कर्ष दर्ज करने और यह कहने का अधिकार नहीं था कि प्रतिवादी पर आरोप सिद्ध नहीं हुए हैं।"

15. उच्चतम न्यायालय ने **कुलदीप सिंह विरुद्ध पुलिस आयुक्त एवं अन्य** {(1999) 2 SCC 10} में यह निर्णय दिया:

"**9.** सामान्यतः उच्च न्यायालय एवं यह न्यायालय घरेलू जांच (departmental enquiry) में दर्ज तथ्यात्मक निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं करते, परन्तु यदि 'दोष' का निष्कर्ष बिना किसी साक्ष्य पर आधारित हो, तो वह निष्कर्ष विकृत होगा और न्यायिक परीक्षण के अधीन होगा।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

10. इसलिए, ऐसे निर्णयों में एक स्पष्ट भेद बनाए रखना आवश्यक है जो विकृत हैं और जो विकृत नहीं हैं। यदि कोई निर्णय बिना किसी साक्ष्य या पूर्णतः अविश्वसनीय साक्ष्य पर आधारित हो, जिस पर कोई सामान्य समझ वाला व्यक्ति विश्वास न करे, तो वह आदेश विकृत माना जाएगा। परन्तु यदि अभिलेख में ऐसा कोई साक्ष्य हो जो स्वीकार्य हो और जिस पर भरोसा किया जा सके, भले ही वह संक्षिप्त ही क्यों न हो, तो ऐसा निष्कर्ष विकृत नहीं माना जाएगा और न्यायालय द्वारा उसमें हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा।"_

16. उच्चतम न्यायालय ने एक अन्य प्रकरण **योगिनाथ बागड़े विरुद्ध महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य** {(1999) 7 SCC 739} में पूर्ववर्ती निर्णयों का परीक्षण कर यह कहा:

"51.... यह विधि सिद्ध है कि यदि निष्कर्ष विकृत हों और अभिलेख में उपलब्ध साक्ष्यों से समर्थित न हों, अथवा घरेलू जांच में दर्ज निष्कर्ष ऐसे हों जिन पर कोई सामान्य विवेकशील व्यक्ति न पहुंचे, तो उच्च न्यायालय और यह न्यायालय दोनों ही इस विषय में हस्तक्षेप कर सकते हैं। **कुलदीप सिंह विरुद्ध पुलिस आयुक्त** में इस न्यायालय ने **नंद किशोर प्रसाद विरुद्ध बिहार राज्य**, **आंध्र प्रदेश राज्य विरुद्ध रामाराव**, **सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया विरुद्ध प्रकाशचंद जैन**, **भारत आयरन वर्क्स विरुद्ध भगुभाई बालूभाई पटेल**, एवं **राजेन्द्र कुमार किंद्रा विरुद्ध दिल्ली प्रशासन** जैसे निर्णयों पर भरोसा करते हुए यह निर्धारित किया कि यद्यपि न्यायालय अनुशासनिक प्राधिकारी या जांच अधिकारी द्वारा दर्ज निष्कर्षों की पुनः अपील के रूप में समीक्षा नहीं कर सकता, किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि किसी भी परिस्थिति में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता। यह स्पष्ट किया गया कि संविधान के अंतर्गत उपलब्ध **न्यायिक पुनरीक्षण (judicial review)** की शक्ति घरेलू जांच को भी समाहित करती है और यदि निष्कर्ष बिना साक्ष्य के हों या ऐसे हों जो कोई सामान्य विवेकशील व्यक्ति न निकाल सके, अथवा वे निष्कर्ष विकृत हों, तो न्यायालय हस्तक्षेप कर सकता है।"_

17. **बी.सी. चतुर्वेदी विरुद्ध भारत संघ एवं अन्य** [(1995) 6 एस.सी.सी. 749] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह निर्णय दिया:

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

"**12.** न्यायिक पुनर्विलोकन (Judicial Review) किसी निर्णय के विरुद्ध अपील नहीं होता, बल्कि उस प्रक्रिया की समीक्षा होती है, जिसके माध्यम से निर्णय लिया गया है। न्यायिक पुनर्विलोकन का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि व्यक्ति के साथ न्यायसंगत व्यवहार हो, न कि यह कि अधिकारी द्वारा लिया गया निष्कर्ष न्यायालय की दृष्टि में आवश्यक रूप से सही हो। जब किसी लोक सेवक के विरुद्ध कदाचार के आरोपों की जांच की जाती है, तो न्यायालय/अधिकरण यह देखता है कि जांच सक्षम अधिकारी द्वारा की गई थी या नहीं, तथा क्या प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन किया गया। यदि निष्कर्ष कुछ साक्ष्य पर आधारित हैं, तो जिस प्राधिकारी को जांच करने का अधिकार सौंपा गया है, उसके पास तथ्यों पर निष्कर्ष निकालने का अधिकार और अधिकार–क्षमता होती है। लेकिन वह निष्कर्ष कुछ साक्ष्य पर आधारित होना चाहिए। अनुशासनात्मक कार्यवाही में न तो साक्ष्य अधिनियम की तकनीकी विधियों की अनिवार्यता होती है और न ही उसमें तथ्यों के प्रमाण के लिए वही कठोर मापदंड लागू होते हैं। जब प्राधिकारी साक्ष्य को स्वीकार करता है और निष्कर्ष को उससे समर्थन प्राप्त होता है, तब अनुशासनिक प्राधिकारी यह निर्णय लेने के लिए अधिकृत होता है कि दोषारोपित अधिकारी दोषी है। न्यायालय/अधिकरण न्यायिक पुनरीक्षण की शक्ति का प्रयोग करते हुए साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करके स्वतंत्र निष्कर्ष निकालने का कार्य नहीं करता। न्यायालय/अधिकरण केवल वहीं हस्तक्षेप कर सकता है जहाँ

जांच कार्यवाही प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के प्रतिकूल या किसी वैधानिक नियम के उल्लंघन में की गई हो, या जब अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा लिया गया निष्कर्ष किसी साक्ष्य पर आधारित न हो। यदि कोई निष्कर्ष ऐसा हो, जिस पर कोई सामान्य समझ वाला व्यक्ति कभी न पहुंच सकता हो, तो न्यायालय/अधिकरण उस निष्कर्ष में हस्तक्षेप कर सकते हैं और तथ्यगत स्थिति के अनुरूप राहत प्रदान कर सकते हैं।"_

18. एक अन्य नवीनतम निर्णय में, **वी. रमणा विरुद्ध आंध्र प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम एवं अन्य** [(2005) 7 एस.सी.सी. 338] में उच्चतम न्यायालय ने यह निर्णय दिया:

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

"**11.** उपरोक्त सभी निर्णयों में एक सामान्य सूत्र यह है कि जब तक प्रशासकीय निर्णय अतार्किक न हो, प्रक्रिया संबंधी त्रुटियों से ग्रस्त न हो, अथवा न्यायालय की अंतरात्मा को झकझोर देने वाला न हो — अर्थात् तर्क या नैतिक मानकों की स्पष्ट अवहेलना करता हो — तब तक न्यायालय को प्रशासकीय निर्णय में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। जैसा कि **Wednesbury** मामले में कहा गया, न्यायालय उस विकल्प की शुद्धता की जांच नहीं करेगा जो प्रशासक ने अपने विवेक से अपनाया है, और न्यायालय को प्रशासक के निर्णय के स्थान पर अपना निर्णय नहीं रखना चाहिए। न्यायिक पुनरीक्षण का क्षेत्र केवल निर्णय–निर्माण की प्रक्रिया में व्याप्त त्रुटियों तक सीमित है, न कि स्वयं निर्णय तक।"_

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

19. वर्तमान मामले में आरोप ऐसे पर्याप्त साक्ष्यों के आधार पर सिद्ध हुए हैं, जिनके आधार पर कोई सामान्य, तर्कसंगत और निष्पक्ष व्यक्ति यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि दोषारोपित अधिकारी के विरुद्ध आरोप सिद्ध हैं। मुझे यह नहीं प्रतीत हुआ कि कोई भी आरोप ऐसे साक्ष्य के आधार पर सिद्ध किया गया हो जो कि या तो अस्तित्वहीन हो, अविश्वसनीय हो, या केवल अनुमान और कल्पना पर आधारित हो।

20. प्रकरण के तथ्यों और परिस्थितियों तथा उपर्युक्त निर्णयों में उच्चतम न्यायालय द्वारा स्थापित विधिक सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, यह स्पष्ट है कि जांच अधिकारी द्वारा दर्ज निष्कर्षों तथा अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा आरोपित दंड, जिसे अपीलीय प्राधिकारी ने भी यथावत् बनाए रखा, में हस्तक्षेप करना न्यायोचित नहीं है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

21. परिणामस्वरूप, याचिका असफल होती है और निरस्त की जाती है। लागत संबंधी कोई आदेश नहीं दिया जाता।

हस्ताक्षरित/–
सतीश के. अग्निहोत्री,
न्यायाधीश

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

अस्वीकरणःहिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु **निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।**

Translated By Shraddha Raj Jyotishi (Advocate)

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur